



भगवान बुद्ध के धम्म की प्रसांगिकता-आज के परिवेश में



भगवान बुद्ध के जन्म के समय, भारतवर्ष हिन्दू धर्म के अमानवीय अवधारणाओं के आतंक से त्राहि-त्राहि कर रहा था। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था की वजह से ऊंच-नीच, छुआ-छूत का बोल-बाला था। अंधविश्वास चर्म सीमा पर था। इसीलिए प्रोफेसर एस.एस. राघवाचार्य लिखते हैं “ भगवान बुद्ध के जीवनकाल से ठीक पहले का समय भारतीय इतिहास का सर्वाधिक अंधकारमय युग था ” भारतीय समाज आज भी उपरोक्त अवधारणाओं से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सका है। परिणाम स्वरूप बहुजन समाज आज (2560 साल बाद) भी सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक रूप से काफी पिछड़ा हुआ है। अतः विश्व के तीन अति गरीब मनुष्यों में से एक भारत में निवास करता है। यह संख्या चीन, नाइजीरिया, बंगलादेश के अति गरीबों से अधिक है। नवजात बच्चों की मृत्युदर में भारत सब देशों में आगे हैं। सन् 2020 में देश की करीब 29 करोड़ आबादी अशिक्षित थी जो संसार की अशिक्षित आबादी का 37 प्रतिशत है। अतः देश मानवीय मूल्यों के स्तर पर संसार में निम्न पायदान पर है। वैश्विक असमानता रिपोर्ट, 2022 के अनुसार गरीब-अमीर की खाई का अंतर भारतवर्ष में सबसे अधिक है। अतः भारतवर्ष में 10 प्रतिशत उच्च आय वर्ग के पास राष्ट्रीय आय का 57 प्रतिशत हिस्सा है। जबकि 50 प्रतिशत निचले स्तर के गरीबों (70 करोड़ आबादी) के पास सिर्फ 13 प्रतिशत राष्ट्रीय आय का हिस्सा है। प्राकृतिक संसाधनों की कमी नहीं है। उत्पादन के संसाधन असमान्य रूप से उच्च जातियों के पास है। अब शिक्षा भी बाजारू हो गई है। अतः धनवान और अधिक धनवान होते जा रहे हैं तथा गरीब और अधिक गरीब। बाजारीकरण व भूमंडलीकरण का अर्थ दोनों हाथों से लूटना हो गया है। देश में मानवीयता बहुत कम नजर आती है। बहुजन समाज कहा जाये।

एक अहम प्रश्न है कि उपरोक्त अमानवीय अवधारणाओं से कैसे निजात पाई जायें जिससे बहुजन का समग्र विकास को सके। बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने बहुत ही गहन अध्ययन कर उपरोक्त दैत्याकार समस्याओं के हल के लिये हम सभी को बौद्ध धम्म प्रदान करके गये हैं। एक जगह बाबासाहेब अपने उद्गार बौद्ध धम्म के बारे में निम्न प्रकार प्रकट करते हैं।

“ बौद्ध धर्म एकांत में आचरण किए जाने वाला कोई रहस्यमय आचार नहीं है। यह एक प्रबल सामाजिक संघ-शक्ति है। आज भी विनाश की चोटी पर खड़े संसार को मार्ग दिखाने का इसमें सामर्थ्य है।बौद्ध धर्म एक क्रांति थी। यह फ्रांस की क्रांति जैसी महान थी। यूं तो यह धार्मिक क्रांति के रूप में जन्मी, मगर यह उससे कहीं बढ़कर थी। ”

इसी प्रकार ई.जी. टेलर ने अपने उद्गार प्रकट किए हैं—

“बहुत समय से आदमी बाहरी ताकतों के शासन में रहा है। यदि उसे सच्चे अर्थ में सभ्य बनना है तो उसे अपने ही नियमों द्वारा अनुशासित रहना सीखना होगा। बौद्ध धर्म ही प्राचीनतम नैतिक प्रणाली है, जिसमें आदमी को स्वयं अपना अनुशासक बनने की शिक्षा दी गई है। इसलिए इस प्रगतिशील संसार को बौद्ध धर्म की आवश्यकता है ताकि वह इससे ऊंची श्रेष्ठतम शिक्षा प्राप्त कर सके।”

उपरोक्त संदर्भ में लेसली बोलटन ने अपने निम्न उद्गार प्रकट किए हैं—

“बौद्ध धर्म में अध्यात्मिक मनोविज्ञान को मैं बहुत महत्वपूर्ण मानता हूँ। बौद्धों की तरह हम यूनिटेरियन संप्रदाय के मानने वाले भी इसाई पुस्तकों या मतों के बाह्य अधिकारों को अस्वीकार करते हैं और स्वयं आदमी के भीतर ही उसका मार्गदर्शक प्रदीप देखते हैं। यूनिटेरियन मत के अनुयायी ईसा और बुद्ध दोनों में श्रेष्ठ जीवन के श्रेष्ठ व्याख्याकार पाते हैं”

उपरोक्त उपलक्ष्य में प्रो. इवाइट गोर्ड अपना मत निम्न प्रकार प्रकट करते हैं—

“संसार के समस्त धार्मिक आचार्यों में भगवान बुद्ध को ही यह गौरव प्राप्त है कि उन्होंने आदमी में विद्यमान क्षमता की तात्त्विक महानता को पहचाना, जिसके द्वारा वह बिना किसी बाह्य सहायता के स्वयं मोक्ष पथ पर अग्रसर हो सकता है। यदि किसी वास्तविक महान पुरुष की महानता समस्त मानव जाति के महत्व का उत्कर्ष करने पर निर्भर करती है तो तथागत से बढ़कर दूसरा कौन यथार्थ अर्थों में महान होने के योग्य हो सकता है? ऐसा कौन है जिसने स्वयं का दर्जा घटाकर और अन्य को अपने ऊपर बैठाकर, स्वयं को इतना ऊंचा कर लिया कि वह प्रज्ञा और मैत्री के उत्कृष्ट शिखर पर पहुंच गया।”

ई.जे. मिल्स बौद्ध धर्म के बारे में निम्न उद्गार प्रकट करते हैं—

“किसी अन्य धर्म में ‘विद्या’ को इतना महत्व नहीं दिया गया और ‘अविद्या’ की इतनी भर्त्सना नहीं की गई, जितनी बुद्ध धर्म में। कोई अन्य धर्म अपनी आंख खुली रखने पर इतना बल नहीं देता।”

उपरोक्त संसार के महान व्यक्तियों के उद्गार समझ लेने से, इस नतीजे पर पहुंचा जा सकता है कि बौद्ध धर्म का अनुसरण ही हमें उपरोक्त अधोगति से छुटकारा दिला सकता है। अतः बुद्ध धर्म के अध्ययन के लिये बाबा साहेब ने बहुत ही उच्च कोटि का बौद्ध ग्रन्थ, ‘भगवान बुद्ध और उनका धर्म’ हमें प्रदान किया, जिसे बौद्ध जगत ने पवित्र ग्रंथ घोषित किया है। उसी ग्रंथ से हम प्रचार-प्रसार के लिये भगवान का प्रथम धर्मोपदेश प्रस्तुत कर रहा हूँ।

भगवान बुद्ध ने जनता के दुख के कारणों की गहराई में जानकारी प्राप्त कर उन कारणों को नष्ट करने के उपाय जानकर, जनता को उनकी जानकारी कराकर दुख का मूलोच्छेद करने के उद्देश्य ही से धर्म की स्थापना की थी। यह दुख दो तरह के होते हैं (1) संपरायिक दुख (2) सांदिष्टिक दुख। (1) वह दुख जो किसी को नरक या अपाय में जन्म गृहण करने पर भोगना पड़ता है।

अतः वह दुख जो जन्म लेने मात्र का ही अवश्यभावी परिणाम है। अर्थात् जन्म गृहण का ही दूसरा पर्याय है। (2) वह दुख जो राग, द्वेष तथा मोह के कारण उत्पन्न होता है और राग, द्वेष और मोह को सम्यक दृष्टि के द्वारा क्षय कर देने से, यही, इसी शरीर में ही जिसका अंत किया जा सकता है। भगवान् बुद्ध ने अपने धम्म को "सांदृष्टिक धम्म" ही कहा है। हमारा नित्य प्रति का धम्मानुस्मरण इसी प्रकार का है—स्वाक्खातो भगवता धम्मो संदृष्टिको अकालिको, एहिपरिससको, ओपनरियको, पच्चत्त वेदितब्बो विज्जूहि ति। "

भिक्षुओं! यह धम्म अच्छी तरह समझा कर कहा गया है। यह सांदृष्टिक धम्म है, यह अकालिक है। इसके बारे में कहा जा सकता है कि आओ और स्वयं देख लो। यह स्वयं के अनुशासन से ऊपर उठाने वाला है और हर विज्ञ (पुरुष) इसका स्वयं साक्षात् कर सकता है। इतना स्पष्ट अन्य धर्मों के बारे में नहीं कहा जा सकता है।

बौद्ध पुनर्जन्म और अबौद्ध पुनर्जन्म, बौद्ध कर्म तथा अबौद्ध कर्म में और बौद्ध मोक्ष या निर्वाण तथा अबौद्ध मोक्ष में शब्द-साम्य भले ही कितना हो, अर्थ साम्य बिल्कुल नहीं है। क्योंकि बौद्ध परंपरा संपूर्णतया अनात्मवादी है और अबौद्ध इस समय प्रायः सभी आत्मवादी है। अनीश्वरवाद तथा अनात्मवाद बौद्ध धम्म के दो आधार स्तम्भ हैं। दूसरे धर्मों में हर आदमी में एक 'आत्मा' मान ली जाती है और सब आदमियों के ऊपर एक 'परमात्मा' मान लिया जाता है। आदमी जितना ही परमात्मा के समीप जाता है उतना ही अपने निकट संबंधियों से दूर चला जाता है। ऐसा क्यों न हो, जब आदमी को जन्म के साथ यह शिक्षा दी जाती है—

जाके हृदय न राम-वैदेही, तजो ताहि कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही, तज्यो पिता प्रह्लाद, विभीषण बंधु, भरत महतारी.....

किन्तु भगवान् बुद्ध के धम्म की आधार शिला आदमी-आदमी का परस्पर का योग्य सम्बंध ही है।

यह सचमुच बड़े खेद की बात है कि इस विषय में बौद्ध धम्म के बारे में लोगों के मन में सर्वथा गलत धारणाएं घर किए हुए हैं। आदमी-आदमी के परस्पर योग्य सम्बन्ध की वजह से प्राचीन काल से ही बौद्ध समाज की ये कुछ विशेषताएं रही हैं—

1. बौद्ध समाज के सभी सदस्य परस्पर एक दूसरे को समान मानते रहे हैं।
2. बौद्ध समाज के सभी सदस्यों को शिक्षा प्राप्त करने की समान स्वतंत्रता रही है।
3. बौद्ध समाज के सभी सदस्यों को कोई भी पेशा कर सकने की स्वतंत्रता रही है।
4. बौद्ध समाज की सभी स्त्रियों को, पुरुषों के समान ही अधिकार रहे हैं।

संक्षेप में कहना हो तो यही कह सकते हैं कि बौद्ध समाज वर्णाश्रम रूपी धर्म की बेड़ियों से सर्वथा स्वतंत्र रहा है। उपरोक्त धम्म को और स्पष्ट रूप से समझने के लिये भगवान् बुद्ध का प्रथम धम्मोपदेश समझना जरूरी है।

जब ज्ञान प्राप्त कर भगवान् बुद्ध पांच परिव्राजकों के पास गये तो कुशल क्षेम की बातचीत हो चुकने के बाद परिव्राजकों ने बुद्ध से प्रश्न किया कि क्या अब भी तपश्चर्या तथा काया-क्लेश में उनका विश्वास है। बुद्ध का उत्तर

नकारात्मक था। बुद्ध ने कहा, दो सिरे (अति) की बातें हैं, एक कामभोग का जीवन और दूसरा काया-क्लेश का जीवन। एक का कहना है कि खाओ पीओ मौज उड़ाओ क्योंकि कल मर ही जाना है। दूसरे का कहना है, सभी वासनाओं का मूलोच्छेद कर दो क्योंकि वे पुर्नजन्म का कारण हैं। उन्होंने दोनों को आदमी के योग्य नहीं माना। वे मध्यम मार्ग (मज्झिम पटिपदा) को मानने वाले थे। जो न तो काम भोग का मार्ग हैं और न काया-क्लेश का मार्ग है। बुद्ध ने परिवाजकों से कहा, “मेरे इस प्रश्न का उत्तर दो कि जब तक तुम्हारे मन में संसारिक अथवा अलौकिक भोगों की कामना बनी रहेगी, क्या तुम्हारा समस्त काया-क्लेश का जीवन व्यर्थ नहीं होगा?” उन्होंने उत्तर दिया, जैसा आप कहते हैं वैसा ही है। “काया-क्लेश का शोक-संतप्त जीवन गुजारने से आप काम-तृष्णा से कैसे मुक्त हो सकते हो?” उन्होंने उत्तर दिया, जैसा आप कहते हैं वैसा ही है। जब आप अपने आप पर विजय पा लेंगे तभी आप काम-तृष्णा से मुक्त होंगे, तब आपमें संसारिक काम भोगों की तृष्णा न रहेगी और तब आपकी स्वाभाविक इच्छाएं आपको दूषित नहीं करेगी। आपको अपनी शारीरिक आवश्यकताओं के अनुसार ही खाना-पीना ग्रहण करना चाहिए। सभी तरह की विषयाशक्ति मानव को कमजोर बनाती है। विषयों में आसक्त प्राणी वासनाओं का गुलाम होता है। सभी काम भोगों की इच्छा रखना अपमानजनक और अभद्र है। लेकिन मैं तुम्हें कहता हूं कि शरीर की स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति करना बुराई नहीं है। शरीर को स्वस्थ रखना एक कर्तव्य है। अन्यथा आप अपने मनोबल को दृढ़ और स्वच्छ नहीं बनाये रख सकेंगे और प्रज्ञा रूपी प्रदीप भी प्रज्वलित नहीं कर सकेंगे।

“इन दोनों सिरे की बातों से अलग एक मध्यम मार्ग है। यह समझ लो कि यही मार्ग है जिसका मैं उपदेश देता हूँ।” यह सुनकर उन्होंने प्रार्थना की कि वे उन्हें विस्तार से बताएं। बुद्ध ने आरंभ करते हुए बताया कि उनका मार्ग सद्गम है, उसे आत्मा और परमात्मा से कुछ लेना देना नहीं है। उनके सद्गम को इस बात से कोई सरोकार नहीं है कि मरने के बाद जीवन का क्या होता है। उनके सद्गम को कर्म-कांड के क्रिया कलापों से भी कुछ लेना देना नहीं है। बुद्ध के धम्म का केन्द्र-बिंदु आदमी है और इस पृथ्वी पर अपने जीवन काल में एक आदमी का दूसरे आदमी के साथ यथा योग्य सम्बन्ध का होना है। बुद्ध ने कहा यह उनका प्रथम आधार तत्व (अभिधारणा) है। उनका दूसरा आधारतत्व है कि प्राणी दुख, कष्ट और दरिद्रता में जीवन यापन कर रहे हैं। संसार दुखों से भरा है और धम्म का उद्देश्य मात्र यही है कि संसार के इस दुख को कैसे दूर किया जाये। इसके अतिरिक्त सद्गम कुछ भी नहीं है। दुख के अस्तित्व की स्वीकृति और दुख को दूर करने का मार्ग दिखाना ही उनके धम्म का आधार है। धम्म के लिए एकमात्र यही सही आधार है और औचित्य हो सकता है जो धर्म इस बात को स्वीकार नहीं करता, वह धर्म ही नहीं है। तब परिवाजकों ने पूछा यदि आपके धम्म का आधार दुख का अस्तित्व और उसे दूर करना है, तब हमें बताइए कि आपका धम्म दुख का नाश कैसे करता है? तब बुद्ध ने उन्हें समझाया कि उनके धम्म के अनुसार यदि हर आदमी (1) पवित्रता के पथ पर

चले (2) धम्म परायणता के पथ पर चले, (3) शील-मार्ग पर चले तो इससे सभी दुखों का अन्त हो जाएगा। तब परिव्राजकों ने बुद्ध से अपने धम्म की व्याख्या करने की प्रार्थना की। बुद्ध ने इसे सहर्ष स्वीकार किया। उन्होंने परिव्राजकों से कहा, " पवित्रता का पथ यह सिखाता है कि जो आदमी अच्छा बनना चाहता है उसके लिए यह आवश्यक है कि वह जीवन के आदर्शों का कोई मापदण्ड स्वीकार करे। मेरे पवित्रता के पथ के अनुसार अच्छे जीवन के 5 आदर्श मापदंड हैं। (1) किसी को हताहत न करना, (2) चोरी न करना अर्थात् दूसरे की चीज को अपनी न बना लेना, (3) व्यभिचार न करना, (4) झूठ न बोलना और (5) नशीली वस्तुओं का सेवन व प्रमाद न करना। यह सिद्धांत मेरी शिक्षाओं के अनुसार जीवन की अच्छाई-बुराई के मापदंड हैं। संसार में हर जगह पतित (गिरे हुए) लोग होते हैं अतः जिस पतित के जीवन का कोई मापदंड नहीं होता, वह यह नहीं जानता कि वह पतित है परिणाम स्वरूप वह हमेशा पतित ही रहता है जैसे भारत में ब्राह्मणवादी लोग। और जो जानता है तो वह पतित अवस्था से ऊपर उठने का प्रयत्न करता है, यही अंतर है। आदमी का स्तर नीचे गिर जाना इतनी बड़ी बात नहीं है जितनी कि किसी स्तर का अभाव होना है। हे परिव्राजकों! तुम पूछ सकते हो कि इन पांचों शील (आदर्शों) का जीवन के मापदण्ड के रूप में स्वीकार किया जाना क्यों अच्छा है। इस प्रश्न का उत्तर तुम्हें स्वयं ही मिल जायेगा, यदि तुम अपने से ही यह प्रश्न पूछो, क्या यह शील व्यक्ति के लिए कल्याणकारी है? साथ ही तुम यह भी पूछो क्या यह आदर्श (शील) सामाजिक कल्याण को प्रोत्साहित करते हैं? यदि इन दोनों प्रश्नों का उत्तर सकारात्मक है तो इसका अर्थ है कि मेरे पवित्रता के पथ के यह पांच शील जीवन के मापदंड के रूप में मानने योग्य है।"

इसके आगे भगवान बुद्ध ने उन्हें आष्टांगिक और शील मार्ग का उपदेश दिया।

बुद्ध ने कहा कि इस मार्ग के आठ अंग हैं-

1. सम्मा दिट्ठी (सम्यक दृष्टि) - अविद्या का विनाश ही सम्यक दृष्टि का उद्देश्य है। यह मिथ्या-दृष्टि की विरोधनी है। अविद्या का अर्थ है आर्य सत्यों तथा दुख के अस्तित्व एवं दुख के निरोध के उपाय को न समझ पाना। सम्यक दृष्टि का अर्थ है, कर्मकांड के क्रिया-कलाप की प्रभावोत्पादकता में विश्वास न रखना और शास्त्रों की पवित्रता की मिथ्या धारणा से मुक्त होना। सम्यक दृष्टि का अर्थ है, अंधविश्वास तथा अलौकिकता का त्याग करना। सम्यक दृष्टि का अर्थ है ऐसी सभी मिथ्या धारणाओं का त्याग करना, जो कल्पना मात्र हैं और जो यथार्थता अथवा अनुभव पर आधारित नहीं हैं। सम्यक दृष्टि के लिये स्वतंत्र मन और स्वतंत्र विचार अति आवश्यक होते हैं।

2. सम्यक संकल्प : हर आदमी के कुछ उद्देश्य, आकांक्षाएं और महत्वाकांक्षाएं होती हैं। सम्यक संकल्प शिक्षा देता है कि ऐसे उद्देश्य, आकांक्षाएं तथा महत्वाकांक्षाएं उच्च स्तर की एवं सराहनीय हो और निम्न स्तर की एवं अयोग्य न हो।

3. सम्यक वाणी : सम्यक वाणी हमें शिक्षा देती है कि (1) आदमी वही बोले जो सत्य है, (2) आदमी असत्य न बोले (3) आदमी दूसरों की बुराई न करे, (4) आदमी परलिब्ध से दूर रहे, (5) आदमी किसी के लिए भी क्रोध और गाली-गलौज वाली भाषा का प्रयोग न करे, (6) आदमी सभी के साथ दया से भरी तथा विनम्र वाणी का प्रयोग करे, (7) किसी आदमी को व्यर्थ की, मूर्खतापूर्ण बातों में नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि उसकी वाणी बुद्धिसंगत और सार्थक होनी चाहिए।

सम्यक वाणी का व्यवहार किसी भय अथवा पक्षपात के कारण नहीं होना चाहिए। इसका इससे कुछ भी सम्बन्ध नहीं होना चाहिए कि कोई श्रेष्ठ आदमी उसके कार्य के बारे में क्या सोचता है अथवा वाणी के व्यवहार के कारण क्या हानि हो सकती है। सम्यक वाणी का मापदंड न किसी ऊपर के आदमी की आज्ञा है और न किसी आदमी के व्यक्तिगत लाभ के लिए है।

4. सम्यक कर्मन्तो (सम्यक कर्मांत) : सही व्यवहार की शिक्षा देता है। यह सिखाता है कि हमारे हर कार्य का आधार दूसरे की भावनाओं और अधिकारों का आदर होना चाहिए। इसका मापदंड क्या है? सम्यक कर्मांत का मापदंड है। आचरण की धारा जो अस्तित्व के आधारभूत नियम के साथ समन्वित होनी चाहिए। जब किसी आदमी के कार्य इन नियमों से समन्वय रखते हो, तो उन्हें सम्यक कर्म के अनुरूप ही समझना चाहिए।

5. सम्यक जीविका : प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविका कमाना होती है। लेकिन अपनी जीविका कमाने के कुछ तरीके हैं और उन तरीकों में कुछ बुरे हैं और कुछ अच्छे हैं। बुरे तरीके वे हैं जो किसी को चोट पहुंचाते हैं अथवा किसी के साथ अन्याय करते हैं। अच्छे तरीके वे हैं जिनसे आदमी बिना किसी को हानि पहुंचाये अथवा किसी के साथ बिना अन्याय किए अपनी जीविका कमाता है यही सम्यक आजीविका है।

6. सम्यक व्यायाम (ठीक प्रयास) : अविद्या को नष्ट करने का प्रथम प्रयास है जो उस द्वार तक पहुंचाकर उसे खोलता है, जहां से उस दुखद कारागार के बाहर निकला जा सकता है। इसके चार उद्देश्य हैं। (1) अष्टांगिक मार्ग विरोधनी चित्त-प्रवृत्तियों को रोकना, (2) ऐसी चित्त-प्रवृत्तियों को दबा देना जो पहले से उत्पन्न हो गई हो। (3) ऐसी चित्त-प्रवृत्तियों को उत्पन्न करना जो आष्टांगिक मार्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हो, (4) ऐसी चित्त प्रवृत्तियों का और अधिक विकास करना और पहले से उत्पन्न चित्त-प्रवृत्तियों में वृद्धि करना।

7. सम्यक स्मृति : यह जागरूकता और विचारशीलता का आह्वान करती है। इसका अर्थ है मन की सतत जागरूकता। बुरी भावनाओं (विचारों) के विरुद्ध चित्त द्वारा निगरानी करना, सम्यक स्मृति का दूसरा नाम है। उपरोक्त आष्टांगिक मार्ग प्राप्त करने वाले व्यक्ति के मार्ग में पांच बंधन अथवा बाधाएं आती हैं। ये पांच बाधाएं हैं लोभ, द्वेष, आलस्य, विचिकित्सा तथा अनिश्चय। इसलिए इन बाधाओं पर विजय पाना आवश्यक है क्योंकि वे वास्तव में बन्धन हैं और इन पर विजय पाने का माध्यम समाधि ही है।

8. सम्यक समाधि : सम्यक समाधि वही नहीं है जो समाधि है। यह उससे बिल्कुल भिन्न है। समाधि चित्त की एकाग्रता मात्र है। इसमें संदेह नहीं है कि यह ध्यान की अवस्था में ले जाती है जो स्वयं प्रेरित होती है और उपरोक्त पाँचों बन्धनों को निलंबित रखती है। लेकिन यह ध्यान की ये अवस्थाएं अस्थाई है। परिणाम स्वरूप संयोजनों का निलंबन भी अस्थाई रहता है। आवश्यकता है चित्त को स्थाई रूप से एकाग्र करने की। चित्त की ऐसी स्थाई एकाग्रता सम्यक समाधि द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

अकेली समाधि एक नकारात्मक स्थिति है क्योंकि वह केवल संयोजनों को अस्थाई तौर पर निलंबित करती है। इसमें मन के लिए कोई प्रशिक्षण नहीं है। सम्यक समाधि सकारात्मक है। एकाग्रता के समय यह मन को एकाग्र करने के साथ ही कुशल कर्म करने के लिए प्रशिक्षित करती है। यह संयोजनोत्पन्न अकुशल कर्मों (अकुशल कार्य और अकुशल विचार) की ओर मन के आकर्षित होने की प्रवृत्ति को ही नष्ट कर देती है। सम्यक समाधि मन को सदा कुशल कर्म के बारे में सोचने के लिए अभ्यस्त करती है। सम्यक समाधि मन को कुशल कर्म करने के लिए अपेक्षित शक्ति प्रदान करती है।

शील का मार्ग :

भगवान बुद्ध ने बताया कि शील-पथ का अर्थ है इन 10 सदगुणों का अभ्यास करना-शील, दान, उपेक्षा, नैष्कर्म्य, वीर्य, शान्ति, सत्य, अधिष्ठान, करुणा और मैत्री।

1. शील : शील का अर्थ है नैतिक स्वभाव, अकुशल न करने की मनोवृत्ति और कुशल करने की मनोवृत्ति, बुराई करने में लज्जा करना। दंड के भय से पाप कर्म से बचे रहना शील है। शील का अर्थ है पाप कर्म से भय खाना।

2. दान : दान का अर्थ है बदले में किसी प्रकार की आशा किए बिना दूसरों की भलाई के निमित्त अपनी संपत्ति को ही नहीं, अपने रक्त, शरीर के अंगों और यहां तक कि अपने प्राण तक को दूसरों को अर्पित कर देना। दुष्टों को नहीं। अन्यथा कर्ण और एकलव्य के महान दान की तरह, दुष्टों को बढ़ावा देना मात्र होगा।

3. उपेक्षा : उपेक्षा का अर्थ है अनाशक्ति, जो उदासीनता से भिन्न है। यह चित्त की वह अवस्था है जिसमें प्रिय-अप्रिय कुछ नहीं, फल कुछ भी हो, उससे निरपेक्ष रहना और लक्ष्य की ओर बढ़ते रहना ही उपेक्षा है।

4. नैष्कर्म्य : इसका अर्थ है संसारिक काम भोगों का त्याग करना।

5. वीर्य : वीर्य का अर्थ है सम्यक प्रयत्न। जो एक बार करने का निश्चय कर लिया उसे अपनी पूरी सामर्थ्य से करने का प्रयास करना और बिना उसे पूरा किए पीछे मुड़कर नहीं देखना।

6. शान्ति : इसका अर्थ है क्षमा शीलता। घृणा के बदले में घृणा न करना। इसका यही सार है क्योंकि घृणा से घृणा कभी शान्त नहीं होती है। यह केवल क्षमाशीलता से ही शांत होती है।

7. सत्य : इसका अर्थ है सत्यवादी होना। आदमी को कभी झूठ नहीं बोलना चाहिए। उसे केवल सत्य ही बोलना चाहिए।

8. अधिष्ठान : इसका अर्थ है अपने उद्देश्य तक पहुंचने का दृढ़ संकल्प।

9. करुणा : करुणा का अर्थ है सभी प्राणीयों के प्रति प्रेमभरी दया भावना।

10. मैत्री : मैत्री का अर्थ है सभी प्राणीयों के प्रति भ्रातृत्व-भावना रखना, न केवल मित्रों के प्रति ही, बल्कि शत्रुओं तक के प्रति भी, न केवल आदमियों के प्रति बल्कि सभी प्राणियों के प्रति भी।

आदमी को उपरोक्त सदगुणों का अपनी सामर्थ्य के साथ अभ्यास करना चाहिए। इसीलिये उन्हें 'पारमिता' भी कहा गया है।

जब समाज में उपरोक्त गुणों का संचार होगा, तभी हिन्दू धर्म की गलत अवधारणाओं से निजात मिलेगी। आपसी भाईचारा बढ़ेगा, मैत्री भावना का विकास होगा, तो बहुजन समाज का विकास हर क्षेत्र में होगा। इस प्रकार भारत समग्र विकास पर आरुढ़ होकर, बौद्ध धम्म गुरु का अपना दर्जा पुनः प्राप्त कर सकता है।

डॉ. जी. डी. दिवाकर

अध्यक्ष, संत गडगे मिशन

एवं पूर्व प्रधान कृषि वैज्ञानिक

बी-2/704, सन्नी वैली, प्लॉट न. 27,

सेक्टर-12, द्वारका, नई दिल्ली-110078

मो. 9868356884